माननीय न्यायधीश एम.एम. कुमार और सबीना जी के समक्ष

भारत संघ एवं अन्य,-याचिकाकर्ता

बनाम

सतनाम सिंह एवं अन्य,-प्रतिवादी

सी.डब्ल्यू.पी. क्रमांक 12000/सीएटी 2005

8 मई, 2008

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद। 226–प्रशासनिक न्यायाधिकरण अधिनियम, 1985–एस. 21–केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण अभ्यास के नियम, 1993–आरएल। 154–समाप्ति आदेशों के पारित होने के लगभग 5 साल बाद ओए दायर किया गया–समय बाधित–ट्रिब्यूनल के समक्ष याचिकाकर्ता द्वारा उठाई गई आपत्ति को स्वीकार किया जाना चाहिए था–केवल याचिकाकर्ताओं द्वारा लाइव कैजुअल लेबर रजिस्टर पर जीवित रखे गए उत्तरदाताओं के नाम उन्हें कार्रवाई का कारण नहीं देंगे नियमितीकरण की राहत प्रदान करना - कैज़ुअल/अस्थायी कर्मचारियों को नियमित या स्थायी सार्वजनिक रोजगार का कोई अधिकार नहीं है - ट्रिब्यूनल का आदेश अवैधता और दिमाग के गैर-प्रयोग से ग्रस्त है - याचिका की अनुमति दी गई।

यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिनियम की धारा 21 (एल) (ए) के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि एक बार अंतिम आदेश पारित हो जाने के बाद ऐसे अंतिम आदेश की तारीख से एक वर्ष के भीतर ओए दाखिल करना आवश्यक है। हालाँकि, अधिनियम की धारा 21 की उप धारा 3 के अनुसार परिसीमा की अवधि छह महीने बढ़ा दी गई है, बशर्ते आवेदक ट्रिब्यूनल को संतुष्ट कर दे कि उसके पास निर्दिष्ट अवधि के भीतर आवेदन न करने का पर्याप्त कारण है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वर्ष 2003 में आवेदक-प्रतिवादियों द्वारा दायर ओए निराशाजनक रूप से समय-बाधित था, जबकि कार्रवाई का कारण वर्ष 1988 में उत्पन्न हुआ था और याचिकाकर्ता द्वारा ट्रिब्यूनल के समक्ष उठाई गई आपत्ति को स्वीकार किया जाना चाहिए था। केवल यह तथ्य कि याचिकाकर्ताओं द्वारा आवेदक-प्रतिवादियों के नाम जीवित कारण श्रम रजिस्टर पर जीवित रखे गए हैं, उन्हें नियमितीकरण की राहत देने के लिए कार्रवाई का कारण प्रस्तुत नहीं करेगा क्योंकि कार्रवाई का कारण 21 सितंबर, 1988 को उत्पन्न हुआ था जब आवेदक-प्रतिवादियों की सेवाएँ समाप्त कर दी गईं। (पैरा 11)

इसके अलावा, कर्नाटक राज्य बनाम उमा देवी (2006) 4 एससीसी 1 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ने अब आधिकारिक रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि आकस्मिक/अस्थायी कर्मचारियों को नियमित या स्थायी सार्वजनिक रोजगार क्योंकि ऐसे कर्मचारी को यह समझा जाना चाहिए कि उसने तदर्थ/दैनिक वेतन रोजगार को पूरी तरह से उसकी प्रकृति और उसके परिणामों को जानते हुए स्वीकार कर लिया है। यह राय दी गई है कि नियमितीकरण को नियुक्ति का तरीका नहीं बनाया जा सकता क्योंकि एक आकस्मिक कर्मचारी की नियुक्ति प्रासंगिक नियमों या प्रक्रिया द्वारा मान्यता प्राप्त उचित चयन पर आधारित नहीं है। (पैरा 12)

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद। 226–केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण अभ्यास नियम 1993–आरएल। 154(सी) परिशिष्ट VII, प्रविष्टि II - परिशिष्ट VIII में प्रावधान है कि एकल पीठ सदस्य केवल विशिष्ट वर्ग

के मामलों पर निर्णय ले सकता है - तदर्थ नियुक्ति के नियमितीकरण से संबंधित मामला - परिशिष्ट VII के तहत न्यायाधिकरण की दो सदस्य पीठ द्वारा निर्णय लिया जाना आवश्यक है - आदेश एकल सदस्य को अलग रखा गया।

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि ट्रिब्यूनल की एकल पीठ के सदस्य इस मुद्दे से निपट नहीं सकते थे क्योंकि नियमों के नियम 154 (सी) के साथ पढ़े जाने वाले परिशिष्ट VII, प्रविष्टि II के अनुसार तदर्थ नियुक्ति के नियमितीकरण से संबंधित मामले का निर्णय किया जाना आवश्यक है। ट्रिब्यूनल की दो सदस्यीय पीठ, एक न्यायिक सदस्य और दूसरी प्रशासनिक सदस्य। नियमावली के नियम 154(सी) के साथ पढ़े गए परिशिष्ट VIII से यह भी स्पष्ट है कि एकल पीठ सदस्य केवल विशिष्ट वर्ग के मामलों का निर्णय कर सकता है। (पैरा 14)

याचिकाकर्ता (भारत संघ) के वकील पुनीत जिंदल,

आवेदक-प्रतिवादियों की ओर से कोई नहीं।

माननीय न्यायधीश एम.एम. कुमार जी

(1) भारत संघ और अन्य द्वारा दायर यह याचिका केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, चंडीगढ़ बेंच, चंडीगढ़ के एकल सदस्य द्वारा पारित आदेश दिनांक 13 मई, 2005 (अनुलग्नक पी. 6) के खिलाफ निर्देशित है (संक्षिप्तता के लिए) 'ट्रिब्यूनल') ओ ए नंबर 1208/एच आर वाई 2003 में। ट्रिब्यूनल ने माना है कि आवेदक-प्रतिवादी अपनी वरिष्ठता के अनुसार अपने नियमितीकरण के लिए विचार किए जाने के हकदार हैं और यदि विज्ञापन के अनुसार चयन की कोई प्रक्रिया पूरी की जानी थी तो याचिकाकर्ता को निर्देशित किया गया कि वे आवेदकों को कानून के अनुसार नई नियुक्ति के लिए उनके मामलों पर विचार करने के लिए अपने आवेदन प्रस्तुत करने के लिए कहें। आगे यह निर्देश दिया गया कि यदि चयन प्रक्रिया पहले ही पूरी हो चुकी है तो याचिकाकर्ताओं या उनके अधिकारियों को किसी भी उपलब्ध रिक्ति के विरुद्ध लाइव कैजुअल लेबर रजिस्टर में उनकी वरिष्ठता के अनुसार नियमितीकरण / अवशोषण के लिए आवेदक-प्रतिवादियों के मामले पर विचार करना था। अम्बाला डिवीजन में उनके नियंत्रण में इकाई या विभाग की।

(2) मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि प्रतिवादी नं. 1 से 9 तक को याचिकाकर्ताओं द्वारा अलग-अलग तारीखों पर आकस्मिक खलासी के रूप में नियुक्त किया गया था और उन्हें 29 जनवरी, 1988 को एक मौखिक आदेश द्वारा हटा दिया गया था। 1 से 9 तक ने नव निर्मित और विज्ञापित पदों पर तरजीही आधार पर विचार करने और उन्हें नियुक्त करने का निर्देश देने के लिए ट्रिब्यूनल के समक्ष मूल आवेदन दायर किया। हालाँकि, याचिकाकर्ताओं द्वारा अपने जवाब में उठाए गए रुख के आधार पर ट्रिब्यूनल से अनुमति प्राप्त करने के बाद याचिकाकर्ताओं द्वारा ओए में की गई प्रार्थना में संशोधन किया गया था। ओ.ए. अंततः ट्रिब्यूनल के एकल पीठ सदस्य द्वारा सुना गया और, 13 मई, 2005 के आदेशों के तहत एकल पीठ सदस्य ने ओ.ए. का निपटारा कर दिया। 17 मई, 2005 को याचिकाकर्ताओं को उपर्युक्त निर्देश जारी करके। व्यथित होकर याचिकाकर्ताओं ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

(3) जब मामला 4 अगस्त, 2005 को मोशन सुनवाई के लिए आया, तो याचिका स्वीकार कर ली गई और 13 मई, 2005 (अनुलग्नक पी. 6) के आक्षेपित आदेश के क्रियान्वयन पर रोक लगा दी गई।

(4) ट्रिब्यूनल ने याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाए गए सीमा के मुद्दे पर आपत्ति पर विचार किया। याचिकाकर्ताओं ने यह तर्क देकर मूल आवेदन दाखिल करने पर सवाल उठाया है कि कार्रवाई का कारण वर्ष 1988 में उत्पन्न हुआ था जब आवेदक-प्रतिवादियों की सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं और प्रशासनिक न्यायाधिकरण अधिनियम, 1985 की धारा 21 के तहत (संक्षिप्तता के लिए 'अधिनियम')) ओ.ए. एक वर्ष की अवधि के भीतर दाखिल किया जा सकता था। ओ.ए. वर्ष 2003 में दायर किया गया मामला स्पष्ट रूप से समयबाधित था और इसमें 15 साल की भारी देरी हुई थी। हालाँकि, ट्रिब्यूनल ने उपर्युक्त तर्क को खारिज करते हुए निम्नानुसार कहा: -

> "वर्तमान मामले में स्वीकृत स्थिति यह है कि आवेदकों ने प्रासंगिक समय पर आकस्मिक खलासी के रूप में काम किया था। उनकी सेवाएँ मौखिक रूप से समाप्त कर दी गईं और बाद में उन्हें अस्थायी दर्जा भी दे दिया गया। उत्तरदाताओं द्वारा जीवित आकस्मिक श्रमिक रजिस्टर में उनके नाम लगातार अद्यतन बनाए रखे जाते हैं। हालाँकि, यह स्पष्ट नहीं है कि यह लाइव कैज़ुअल लेबर रजिस्टर जगाधरी के स्टोर डिपो से संबंधित है या जगाधरी कार्यशाला से। आवेदकों को अपने प्रासंगिक दस्तावेजों को विधिवत सत्यापित करने के लिए भी कहा गया था, - अनुबंध ए 3, दिनांक 18 फरवरी, 2003 के अनुसार। उत्तरदाताओं ने लिखित बयान में यह भी स्वीकार किया है कि आवेदकों को जगाधरी डिपो में उनकी वरिष्ठता के अनुसार अवशोषित / नियमित किया जाएगा। रेलवे। इसलिए, उत्तरदाताओं द्वारा उठाई गई सीमा की दलील कि ओ.ए. कालबाधित होना तर्कसंगत नहीं है क्योंकि आवेदकों के पक्ष में कार्रवाई का आवर्ती कारण अभी भी जीवित है। इस प्रकार, वर्तमान ओ ए माना जाता है कि यह प्रशासनिक न्यायाधिकरण अधिनियम की धारा 21 से प्रभावित नहीं है, क्योंकि ओ.ए. आवेदकों द्वारा वर्ष 2003 में दायर किया गया है।"

(5) याचिकाकर्ताओं ने यह मुद्दा भी उठाया है कि संशोधन के बाद भी आवेदक-प्रतिवादियों द्वारा उनकी सेवाओं को नियमित करने के लिए कोई प्रार्थना नहीं की गई थी और ऐसी प्रार्थना के अभाव में उन्हें कोई राहत नहीं दी जा सकती थी। यहां तक कि याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाई गई उपरोक्त आपत्ति को भी ट्रिब्यूनल ने यह कहते हुए खारिज कर दिया है:

> "इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए, आवेदकों के मामले उनके लिखित बयान में उत्तरदाताओं के कथन के अनुसार उनके नियमितीकरण के लिए विचाराधीन हैं।" इसलिए, उत्तरदाताओं द्वारा उठाई गई दूसरी दलील यह है कि आवेदकों ने ओ.ए. के नियमितीकरण के लिए प्रार्थना नहीं की है। यह भी टिकाऊ नहीं है क्योंकि यह प्रार्थना उत्तरदाताओं के मन में पहले से ही है और उन्होंने ओ.ए. में कथनों का खंडन भी किया है। साथ ही इस संबंध में प्रत्युत्तर में भी। इस प्रकार, उत्तरदाताओं द्वारा ली गई इस तकनीकी आपत्ति पर नियमितीकरण के लिए उनकी प्रार्थना को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

(6) आवेदक-प्रतिवादी जगाधरी में स्टोर डिपो में कार्यरत थे जहां खलासी के कोई पद नहीं थे जिसके लिए उन्हें नियमित किया जा सके। ट्रिब्यूनल ने पाया कि जगाधरी वर्कशॉप में याचिकाकर्ताओं के पास कई रिक्तियां थीं। यह राय दी गई है कि आवेदक-प्रतिवादियों को इन पदों पर समायोजित किया जा सकता है। इसने उस दृष्टिकोण के समर्थन में अधिसूचना आरबीई संख्या 145/97 दिनांक 23 अक्टूबर, 1997 (अनुलग्नक आर.एल.) के पैरा 2.1 और 3.1 को उद्धृत किया है। उपर्युक्त पैरा इस प्रकार है:

> "2.1 हाल ही में जारी किए गए निर्देशों में, 30 अप्रैल, 1996 को 31 मार्च, 1998 तक सभी आकस्मिक श्रमिकों को नियमित करने के संदर्भ में, हालांकि, यह प्रदान किया गया है कि स्क्रीनिंग के

बाद विभाग में रिक्तियों के विरुद्ध कैजुअल लेबर की भर्ती पूरी हो चुकी है, विभाग में बचे हुए अनस्क्रीन कैजुअल लेबर को उसी डिवीजन/अतिरिक्त डिवीजनल यूनिट/उसी डिवीजन में स्थित कार्य दुकानों (जहां रिक्तियां मौजूद हैं) के अन्य विभागों में नियमितीकरण के लिए स्क्रीनिंग की जानी चाहिए। संबंधित विभागों/इकाइयों/कार्यशालाओं में आकस्मिक श्रमिकों/विकल्पों का नियमितीकरण) और, इसलिए, अन्य प्रभागों में जहां रिक्तियां मौजूद हैं लेकिन जिनमें कोई आकस्मिक श्रमिक नहीं है।''

"3.1. यह जोड़ा जा सकता है कि उपरोक्त से यह निष्कर्ष निकलता है कि आकस्मिक श्रमिकों को, यदि कोई हो, उस विभाग (वरिष्ठ इकाई) से नियमित किया जा सकता है, जहां वे काम कर रहे हैं या काम कर चुके हैं, जहां नियमितीकरण की उनकी बारी पहले आती है, रिक्तियों की उपलब्धता के आधार पर। और ऐसे विभागों (वरिष्ठता इकाई) में उनकी वरिष्ठता और ऐसा हो सकता है कि वे ऐसे विभाग में नियमित हो जाएं जहां उन्हें अधिकतम वर्षों की सेवा में नहीं रखा गया हो।"

(7) ट्रिब्यूनल ने अधिसूचना के उपर्युक्त प्रावधानों को यह देखते हुए समझा कि आकस्मिक श्रम का नियमितीकरण केवल एक विंग तक ही सीमित नहीं है जिसे डिवीजन-वार विस्तारित किया गया है। व्याख्या के परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाई गई दलील कि आवेदक-प्रतिवादी जो केवल जगाधरी स्टोर डिपो में काम कर रहे थे और अकेले उस इकाई में नियमितीकरण के लिए विचार किया जा सकता था, खारिज कर दी गई। ट्रिब्यूनल द्वारा आगे यह माना गया है कि आवेदक-उत्तरदाताओं ने भी अस्थायी स्थिति प्राप्त कर ली है। उपर्युक्त निष्कर्ष को दर्ज करने के बाद, ट्रिब्यूनल ने नर सिंह पाल बनाम यूओआई (1) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले को लागू किया, जिसमें कहा गया कि आवेदक-प्रतिवादी बेहतर स्थिति में थे क्योंकि पहले कोई नोटिस नहीं दिया गया था। उनकी सेवाएँ समाप्त करने का आदेश दिया गया और संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करते हुए मौखिक आदेश द्वारा उनकी सेवाएँ समाप्त कर दी गईं। ट्रिब्यूनल ने यूओआई बनाम मोहन पाल (2) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भी भरोसा किया, इस दृष्टिकोण के समर्थन में कि अस्थायी स्थिति हासिल करने वाले कैज़ुअल मजदूरों को उनकी इच्छा या इच्छानुसार नहीं हटाया जा सकता है। नियोक्ता का. इसमें आगे कहा गया कि यदि पर्याप्त काम था और नियोक्ता द्वारा काम करने के लिए अधिक आकस्मिक मजदूरों को नियोजित किया जाना था, तो अस्थायी स्थिति प्राप्त करने वाले आकस्मिक मजदूरों को सेवा से नहीं हटाया जाना था। यह मानते हुए कि रेलवे में विशेष रूप से जगाधरी वर्कशॉप में खलासियों की निरंतर आवश्यकता थी और आवेदक-प्रतिवादियों के नाम उस तारीख तक लाइव कैजुअल लेबर रजिस्टर पर रखे गए थे, ट्रिब्यूनल ने माना कि आवेदक-प्रतिवादियों के पास नियमितीकरण के लिए कार्रवाई का कारण था/ अवशोषण.

(1) (2000) 3 एससीसी 588

(2) (2) (2002)4 एससीसी 573

(8) याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील श्री पुनीत जिंदल ने हमारे सामने निम्नलिखित तर्क उठाए हैं -

(1) कि आवेदक-प्रतिवादियों को नियमितीकरण की राहत नहीं दी जा सकती क्योंकि उनकी सेवाएं वर्ष 1988 में समाप्त कर दी गई थीं, खासकर जब वे केवल दो वर्ष की अवधि के लिए कार्य किया था। अपने प्रस्तुतीकरण के समर्थन में, विद्वान वकील ने कर्नाटक सचिव राज्य बनाम उमा देवी (3) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा जताया है। विद्वान वकील के अनुसार आवेदक-प्रतिवादी का मामला किसी भी निर्देश के अंतर्गत नहीं आता है और न ही उनकी सेवाओं को जगाधरी में स्टोर डिपो के अलावा किसी अन्य विभाग में नियमित करने का आदेश दिया जा सकता है जहां उन्होंने सेवा की थी;

(2) आवेदक-प्रतिवादी द्वारा उनके ओ.ए. में कोई प्रार्थना नहीं की गई थी। समाप्ति आदेश को रद्द करने के लिए संशोधन के बाद भी न ही उनके द्वारा अपनी सेवाओं को नियमित करने के लिए कोई प्रार्थना की गई। इस संबंध में उन्होंने हमारा ध्यान उनके ओ.ए. में असंशोधित और संशोधित प्रार्थना खंड की ओर आकर्षित किया है। पृष्ठ 33 और 65 पर, विद्वान वकील ने बताया है कि प्रारंभ में जब ओ.ए. दायर किया गया था, राहत का दावा यह था कि याचिकाकर्ताओं को 13 जून, 2003 के विज्ञापन के तहत सीधी भर्ती के माध्यम से नए स्वीकृत पदों पर नए व्यक्तियों को नियुक्त करने से रोका जाना चाहिए, यह दलील देकर कि आवेदक-प्रतिवादी जीवित आकस्मिक श्रमिक रजिस्टर पर पैदा हुए थे। तब मूल आवेदन में संशोधन किया गया था और संशोधित आवेदन में भी पृष्ठ 65 पर प्रार्थना याचिकाकर्ताओं को खलासियों आदि के ग्रुप "डी" कैडर में खाली पड़ी रिक्तियों पर विचार करने और नियुक्त करने के लिए याचिकाकर्ताओं को उचित निर्देश जारी करने के लिए थी। याचिकाकर्ता या किसी अन्य रेलवे डिवीजन में जहां ग्रुप "डी" के रिक्त पद उपलब्ध थे। आगे राहत का दावा यह किया गया कि आवेदक-उत्तरदाताओं को इस आधार पर रिक्त पदों पर नियुक्ति पर विचार करने के लिए इस आधार पर कानूनी रूप से हकदार घोषित किया जाए कि उनका नाम जीवित आकस्मिक श्रमिक रजिस्टर में दर्ज है। विद्वान वकील ने कहा है कि आवेदक-उत्तरदाताओं द्वारा सेवाओं के नियमितीकरण के लिए कोई प्रार्थना नहीं की गई थी।

3. श्री जिंदल ने तब तर्क दिया कि केंद्र सरकार ने अधिनियम की धारा 22 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण नियम 1993 (संक्षिप्तता के लिए 'नियम') बनाए हैं। नियम 154 के अनुसार विवाद का वर्गीकरण दिया गया है और कुछ विवादों का निर्णय ट्रिब्यूनल की एकल सदस्य पीठ द्वारा किया जा सकता है जबकि अधिक महत्वपूर्ण विषय का निर्णय ट्रिब्यूनल की केवल दो सदस्य पीठ (जिसमें एक न्यायिक सदस्य और एक प्रशासनिक सदस्य शामिल है) द्वारा किया जा सकता है। परिशिष्ट VII के साथ पठित नियम 154(सी), प्रविष्टि 2 तदर्थ नियुक्ति/नियमितीकरण से संबंधित है जिस पर दो सदस्य पीठ द्वारा निर्णय लिया जाना आवश्यक है।

(3) (2006) 4 एससीसी 1

परिशिष्ट VIII के अनुसार एक एकल सदस्य पीठ केवल निम्नलिखित श्रेणी के मामलों पर निर्णय ले सकती है, जैसे कि सरकारी आवास का आवंटन या बेदखली; चिकित्सा प्रतिपूर्ति, छुट्टी, कार्यभार ग्रहण समय, एलटीसी और ओवर-टाइम के दावे; सेवाकाल में मरने वाले आश्रितों की अनुकंपा नियुक्ति/नियुक्ति; दक्षता बार का क्रॉस; जन्म की तारीख; 'चरित्र नामावली में प्रविष्टि;' गोपनीय रिकॉर्ड/सेवा रिकॉर्ड, केंद्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 के तहत दंड के उपाय के अलावा अन्यथा बनाया गया; वेतन का निर्धारण; रेलवे कर्मचारियों को पास प्रदान करना; पेंशन, पारिवारिक पेंशन, अन्य सेवानिवृत्ति लाभ और सेवानिवृत्ति लाभों पर ब्याज का अनुदान; अग्रिम/ऋण देना या देने से इंकार करना; भत्ते देना, अस्वीकार करना या वसूली करना; पोस्टिंग/ट्रांसफर और वेतन वृद्धि में ठहराव।

(9) आवेदक-उत्तरदाताओं की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ है।

(10) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील को सुनने के बाद, हमारा मानना है कि उनके द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुति में दम है। इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि आवेदक-उत्तरदाताओं की सेवाएं जो कैज़ुअल खलासी के रूप में लगी हुई थीं, उन्हें 21 अगस्त, 1988 को हटा दिया गया था। उन्होंने अपनी सगाई से पहले लगभग दो साल तक ही काम किया था। ट्रिब्यूनल के पास जाने में इतनी बड़ी देरी का कोई स्पष्टीकरण नहीं है। अधिनियम की धारा 21 (एल) (ए) असंदिग्ध शब्दों में, कार्रवाई का कारण उत्पन्न होने की तारीख से ट्रिब्यूनल से संपर्क करने के लिए अधिकतम एक वर्ष की अवधि प्रदान करती है। अधिनियम की धारा 21(1)(ए) इस प्रकार है:

"21. परिसीमा.–(1) एक न्यायाधिकरण किसी आवेदन को स्वीकार नहीं करेगा,–(ए) ऐसे मामले में जहां धारा 20 की उपधारा (2) के खंड (ए) में उल्लिखित अंतिम आदेश के संबंध में किया गया है शिकायत, जब तक कि आवेदन न किया गया हो, उस तारीख से एक वर्ष के भीतर, जिस दिन ऐसा अंतिम आदेश दिया गया है;

(बी) ऐसे मामले में जहां धारा 20 की उपधारा (2) के खंड (बी) में उल्लिखित अपील या अभ्यावेदन किया गया है और उसके बाद ऐसे अंतिम आदेश के बिना छह महीने की अवधि समाप्त हो गई है, छह महीने की उक्त अवधि की समाप्ति की तारीख से एक वर्ष के भीतर।

(2) उप-धारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां,- (ए) शिकायत जिसके संबंध में आवेदन किया गया है वह तीन साल की अवधि के दौरान किसी भी समय किए गए किसी भी आदेश के कारण उत्पन्न हुई थी। वह तारीख जिस पर इस अधिनियम के तहत उस मामले के संबंध में ट्रिब्यूनल का अधिकार क्षेत्र, शक्तियां और प्राधिकार प्रयोग योग्य हो जाता है जिससे ऐसा आदेश संबंधित है; और (बी) ऐसी शिकायत के निवारण के लिए किसी भी उच्च न्यायालय के समक्ष उक्त तिथि से पहले कोई कार्यवाही शुरू नहीं की गई थी, आवेदन पर ट्रिब्यूनल द्वारा विचार किया जाएगा यदि यह खंड (ए) में निर्दिष्ट अवधि के भीतर किया जाता है, या, जैसा कि मामला, उपधारा (1) के खंड (बी) में या उक्त तिथि से छह महीने की अवधि के भीतर, जो भी अवधि बाद में समाप्त हो, हो सकती है।

(3) उपधारा (1) या उपधारा (2) में किसी बात के होते हुए भी, किसी आवेदन को उपधारा (1) के खंड (ए) या खंड (बी) में निर्दिष्ट एक वर्ष की अवधि के बाद स्वीकार किया जा सकता है। , जैसा भी मामला हो, उप-धारा (2) में निर्दिष्ट छह महीने की अवधि, यदि आवेदक ट्रिब्यूनल को संतुष्ट करता है कि उसके पास ऐसी अवधि के भीतर आवेदन न करने का पर्याप्त कारण है।

(11) अधिनियम की धारा 21(1)(ए) के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि एक बार अंतिम आदेश पारित हो जाने के बाद ओ.ए. ऐसा अंतिम आदेश दिए जाने की तारीख से एक वर्ष के भीतर दाखिल किया जाना आवश्यक है। हालाँकि, अधिनियम की धारा 21 की उपधारा (3) के अनुसार परिसीमा की अवधि छह महीने बढ़ा दी गई है, बशर्ते आवेदक ट्रिब्यूनल को संतुष्ट कर दे कि उसके पास निर्दिष्ट अवधि के भीतर आवेदन न करने का पर्याप्त कारण है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि ओ.ए. वर्ष 2003 में आवेदक-प्रतिवादियों द्वारा दायर की गई याचिका निराशाजनक रूप से समय-बाधित थी, जबकि कार्रवाई का कारण वर्ष 1988 में उत्पन्न हुआ था और याचिकाकर्ता द्वारा ट्रिब्यूनल के समक्ष उठाई गई आपत्ति को स्वीकार किया जाना चाहिए था। केवल यह तथ्य कि याचिकाकर्ताओं द्वारा आवेदक-उत्तरदाताओं के नाम जीवित आकस्मिक श्रमिक रजिस्टर पर जीवित रखे गए हैं, उन्हें नियमितीकरण की राहत देने के लिए कार्रवाई का कारण नहीं दिया जाएगा क्योंकि कार्रवाई का कारण 21 सितंबर, 1988 को उत्पन्न हुआ था जब आवेदक-प्रतिवादियों की सेवाएँ समाप्त कर दी गईं।

(12) हमारा यह भी मानना है कि उमा देवी (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ने अब आधिकारिक तौर पर माना है कि आकस्मिक/अस्थायी कर्मचारियों को नियमित या स्थायी सार्वजनिक रोजगार का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि ऐसे कर्मचारी को विज्ञापन/ज़ोक/दैनिक वेतन रोज़गार की प्रकृति और उसके परिणामों को पूरी तरह से जानते हुए स्वीकार कर लिया गया माना जाना चाहिए। यह राय दी गई है कि नियमितीकरण को नियुक्ति का तरीका नहीं बनाया जा सकता क्योंकि एक आकस्मिक कर्मचारी की नियुक्ति प्रासंगिक नियमों या प्रक्रिया द्वारा मान्यता प्राप्त उचित चयन पर आधारित नहीं है। फैसले के पैरा 45, 46 और 47 में यह माना गया है कि ऐसे कर्मचारी से न तो कोई वैध अपेक्षा है और न ही नियोक्ता की ओर से उन्हें पद पर समाहित करने का दायित्व है। निम्नलिखित पैरा संविधान पीठ के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है जो इस प्रकार है:

> "45. यह निर्देश देते समय कि नियुक्ति, अस्थायी या आकस्मिक, को नियमित या स्थायी किया जाए, अदालतें इस तथ्य से प्रभावित होती हैं कि संबंधित व्यक्ति ने कुछ समय के लिए और कुछ मामलों में काफी समय तक काम किया है। ऐसा नहीं है कि जो व्यक्ति अस्थायी या आकस्मिक प्रकृति की नियुक्ति स्वीकार करता है, उसे अपने रोजगार की प्रकृति के बारे में जानकारी नहीं है। वह रोज़गार को खुली आँखों से स्वीकार करता है। यह सच हो सकता है कि वह मोल-भाव करने की स्थिति में नहीं है - हाथ की दूरी पर नहीं - क्योंकि वह अपनी आजीविका चलाने के लिए कुछ रोजगार की तलाश में है और जो कुछ भी मिलता है उसे स्वीकार कर लेता है। लेकिन केवल उस आधार पर, नियुक्ति की संवैधानिक योजना को खारिज करना और यह विचार करना उचित नहीं होगा कि जो व्यक्ति अस्थायी या आकस्मिक रूप से नियोजित हुआ है, उसे स्थायी रूप से जारी रखने का निर्देश दिया जाना चाहिए। ऐसा करने से, यह सार्वजनिक नियुक्ति का एक और तरीका तैयार करेगा जो स्वीकार्य नहीं है। यदि अदालत इस आधार पर इस प्रकृति के संविदात्मक रोजगार को रद्द कर देती है कि पार्टियों के पास समान सौदेबाजी की शक्ति नहीं है, तो इससे भी अदालत उस कर्मचारी को कोई राहत देने में सक्षम नहीं होगी। प्रशासन की अनिवार्यताओं को देखते हुए, ऐसे आकस्मिक या अस्थायी रोजगार पर पूर्ण प्रतिबंध संभव नहीं है और यदि लगाया जाता है, तो इसका मतलब केवल यह होगा कि कुछ लोग जो कम से कम अस्थायी, संविदात्मक या आकस्मिक रूप से रोजगार प्राप्त करते हैं, उन्हें ऐसा रोजगार प्राप्त होने पर वह रोजगार भी नहीं मिलेगा। रोजगार से उन्हें कम से कम कुछ राहत तो मिलती है..."

(13) उपर्युक्त निर्णय का माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नेशनल फर्टिलाइजर्स लिमिटेड बनाम सोमवीर सिंह (4) के मामलों में पालन और लागू किया गया है। , राम प्रवेश सिंह बनाम बिहार राज्य (5), और पंजाब स्टेट वेयर हाउसिंग कॉर्पोरेशन बनाम मनमोहन सिंह (6)।

(14) हम टीम के वकील द्वारा उठाए गए विवाद में भी योग्यता पाते हैं कि ट्रिब्यूनल की एकल पीठ के सदस्य इस मुद्दे से निपट नहीं सकते थे क्योंकि नियमों के नियम 154 (सी) के साथ पढ़े गए परिशिष्ट VII, प्रविष्टि II के अनुसार मामला तदर्थ नियुक्ति के नियमितीकरण के संबंध में ट्रिब्यूनल की दो सदस्य पीठों द्वारा निर्णय लिया जाना आवश्यक है, जिनमें से एक न्यायिक सदस्य और दूसरा प्रशासनिक सदस्य है। नियमों के नियम 154(सी) के साथ पढ़े गए परिशिष्ट VIII से यह भी स्पष्ट है कि एकल पीठ सदस्य केवल विशिष्ट वर्ग के मामलों का निर्णय कर सकता है जिसमें सरकारी आवास का आवंटन या बेदखली शामिल है; चिकित्सा प्रतिपूर्ति, छुट्टी, कार्यभार ग्रहण समय, एल.टी.सी. के दावे और समयोपरि; सेवाकाल में मरने वाले आश्रितों की अनुकंपा नियुक्ति/नियुक्ति; दक्षता बार का क्रॉस; जन्म की तारीख; केंद्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 के तहत दंड के उपाय के अलावा अन्यथा बनाया गया गोपनीय रिकॉर्ड/सेवा रिकॉर्ड; वेतन का निर्धारण; रेलवे कर्मचारियों को पास प्रदान करना; पेंशन, पारिवारिक पेंशन, अन्य सेवानिवृत्ति लाभ और सेवानिवृत्ति लाभों पर ब्याज का अनुदान; अग्रिम/ऋण देना या देने से इंकार करना; अनुदान देने से इंकार या भत्ते की वसूली; पोस्टिंग/ट्रांसफर और वेतन वृद्धि में ठहराव।

(15) मोहन पाल (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय, जिस पर ट्रिब्यूनल द्वारा भरोसा किया गया है, आकस्मिक श्रमिक (अस्थायी स्थिति और विनियमों का अनुदान) योजना 1993 से संबंधित है। के खंड 3 के अनुसार जैसा कि फैसले के पैरा 2 में बताया गया है, यह योजना रेलवे और दूरसंचार विभागों पर लागू नहीं होगी। इसलिए, याचिकाकर्ताओं जैसे रेलवे के कर्मचारियों के लिए 1993 की योजना के आवेदन को बाहर रखा गया है और ट्रिब्यूनल ने उपरोक्त पहलू को नजरअंदाज करके कानून में गंभीर त्रुटि की है। इसी तरह नरसिंह पाल के मामले (सुप्रा) के फैसले का भी वर्तमान मामले के तथ्यों पर कोई लागू नहीं होगा क्योंकि वहां कर्मचारी ने 10 साल से अधिक समय तक काम किया है और क्षेत्रीय दर्जा हासिल कर लिया है। कर्मचारी की ओर से ट्रिब्यूनल में जाने में कोई देरी नहीं की गई। इसलिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। किसी भी मामले में उमा देवी (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा की गई घोषणा के अनुसार इस प्रकृति के सभी निर्णयों को खारिज कर दिया गया माना जाता है। इस प्रकार ट्रिब्यूनल का आदेश अवैधता और दिमाग का उपयोग न करने से ग्रस्त है जैसा कि पिछले पैराग्राफ में बताया गया है।

(4) (2006) 5 एससीसी-439

(5) (5) (2006) 8 एससीसी-381

(6) (6) (2007) 9 एससीसी-337

(16) ऊपर बताए गए कारणों से, यह याचिका सफल होती है। ओ.ए. संख्या 1208/एचआर/2003 (अनुलग्नक पी-6) में ट्रिब्यूनल के एकल सदस्य द्वारा पारित आदेश दिनांक 13 मई, 2006 (अनुलग्नक पी-6) को रद्द किया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और कसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्यवन के उद्देश्य के लए उपयुक्त रहेगा।

अर्शबीर कौर संधू

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी हरियाणा.